केदारनाथ सिंह

(1934 – 2018)

केदारनाथ सिंह का जन्म बलिया ज़िले के चकिया गाँव में हुआ। काशी हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. करने के बाद उन्होंने वहीं से 'आधुनिक हिंदी कविता में बिम्ब-विधान' विषय पर पीएच.डी. उपाधि प्राप्त की। कुछ समय गोरखपुर में हिंदी के प्राध्यापक रहे फिर जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में भारतीय भाषा केंद्र में हिंदी के प्रोफ़ेसर के पद से अवकाश प्राप्त किया।

केदारनाथ सिंह मूलत: मानवीय संवेदनाओं के कवि हैं। अपनी कविताओं में उन्होंने बिंब-विधान पर अधिक बल दिया है। केदारनाथ सिंह की कविताओं में शोर-शराबा न होकर, विद्रोह का शांत और संयत स्वर सशक्त रूप में उभरता है। ***ज़मीन पक रही है*** *संकलन में* ***ज़मीन, रोटी, बैल*** *आदि उनकी इसी प्रकार की कविताएँ हैं। संवेदना और विचारबोध उनकी कविताओं में साथ-साथ चलते हैं।*

जीवन के बिना प्रकृति और वस्तुएँ कुछ भी नहीं हैं–यह अहसास उन्हें अपनी कविताओं में आदमी के और समीप ले आया है। इस प्रक्रिया में केदारनाथ सिंह की भाषा और भी नम्य और पारदर्शी हुई है और उनमें एक नयी ऋजुता और बेलौसपन आया है। उनकी कविताओं में रोज़मर्रा के जीवन के अनुभव परिचित बिंबों में बदलते दिखाई देते हैं। शिल्प में बातचीत की सहजता और अपनापन अनायास ही दृष्टिगोचर होता है। ***अकाल में सारस*** *कविता संग्रह पर उनको 1989 के* ***साहित्य अकादमी पुरस्कार*** *से और 1994 में मध्य प्रदेश शासन द्वारा संचालित* ***मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रीय सम्मान*** *तथा* ***कुमारन आशान, व्यास सम्मान, दयावती मोदी पुरस्कार*** *आदि अन्य कई सम्मानों से भी सम्मानित किया गया है।*

अब तक केदारनाथ सिंह के सात काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं– ***अभी बिलकुल अभी, ज़मीन पक रही है, यहाँ से देखो, अकाल में सारस, उत्तर कबीर तथा अन्य कविताएँ - बाघ, टालस्टाय और साईकिल। कल्पना और छायावाद*** *और* ***आधुनिक हिंदी कविता*** *में* ***बिंब विधान का विकास*** *उनकी आलोचनात्मक पुस्तकें हैं।* ***मेरे समय के शब्द*** *तथा* ***कब्रिस्तान में पंचायत*** *निबंध संग्रह हैं। हाल ही में उनकी चुनी हुई कविताओं का संग्रह* ***प्रतिनिधि कविताएँ*** *नाम से प्रकाशित हुआ है। उनके द्वारा संपादित* ***ताना-बाना*** *नाम से विविध भारतीय भाषाओं का हिंदी में अनूदित काव्य संग्रह हाल ही में प्रकाशित हुआ है।*

Reprint 2025-26

बनारस कविता में प्राचीनतम शहर बनारस के सांस्कृतिक वैभव के साथ ठेठ बनारसीपन पर भी प्रकाश डाला गया है। बनारस शिव की नगरी और गंगा के साथ विशिष्ट आस्था का केंद्र है। बनारस में गंगा, गंगा के घाट, मंदिर तथा मंदिरों और घाटों के किनारे बैठे भिखारियों के कटोरे जिनमें वसंत उतरता है—का चित्र बनारस कविता में अंकित हुआ है।

इस शहर के साथ मिथकीय आस्था—काशी और गंगा के सान्निध्य से मोक्ष की अवधारणा जुड़ी है। गंगा में बंधी नाव, एक ओर मंदिरों-घाटों पर जलने वाले दीप तो दूसरी तरफ़ कभी न बुझने वाली चिताग्नि, उनसे तथा हवन इत्यादि से उठने वाला धुआँ—यही तो है बनारस। यहाँ हर कार्य अपनी 'रौ' में होता है। यह बनारस का चरित्र है। आस्था, श्रद्धा, विरक्ति, विश्वास, आश्चर्य और भक्ति का मिला जुला रूप बनारस है। काशी की अति प्राचीनता, आध्यात्मिकता एवं भव्यता के साथ आधुनिकता का समाहार ***बनारस*** कविता में मौजूद है। यह कविता एक पुरातन शहर के रहस्यों को खोलती है, बनारस एक मिथक बन चुका शहर है, इस शहर की दार्शनिक व्याख्या यह कविता करती है। कविता भाषा संरचना के स्तर पर सरल है और अर्थ के स्तर पर गहरी। कविता का शिल्प विवरणात्मक होने के साथ ही कवि की सूक्ष्म दृष्टि का परिचायक है।

दिशा कविता बाल मनोविज्ञान से संबंधित है जिसमें पतंग उड़ाते बच्चे से कवि पूछता है हिमालय किधर है। बालक का उत्तर बाल सुलभ है कि हिमालय उधर है जिधर उसकी पतंग भागी जा रही है। हर व्यक्ति का अपना यथार्थ होता है, बच्चे यथार्थ को अपने ढंग से देखते हैं। कवि को यह बाल सुलभ संज्ञान मोह लेता है। कविता लघु आकार की है और यह कहती है कि हम बच्चों से कुछ-न-कुछ सीख सकते हैं। कविता की भाषा सहज है।

© NCERT not to be republished

बनारस

इस शहर में वसंत
अचानक आता है
और जब आता है तो मैंने देखा है
लहरतारा या मडुवाडीह की तरफ़ से
उठता है धूल का एक बवंडर
और इस महान पुराने शहर की जीभ
किरकिराने लगती है

जो है वह सुगबुगाता है
जो नहीं है वह फेंकने लगता है पचखियाँ
आदमी दशाश्वमेध पर जाता है
और पाता है घाट का आखिरी पत्थर
कुछ और मुलायम हो गया है
सीढ़ियों पर बैठे बंदरों की आँखों में
एक अजीब सी नमी है
और एक अजीब सी चमक से भर उठा है
भिखारियों के कटोरों का निचाट खालीपन

तुमने कभी देखा है
खाली कटोरों में वसंत का उतरना!
यह शहर इसी तरह खुलता है
इसी तरह भरता
और खाली होता है यह शहर

Reprint 2025-26

© NCERT not to be republished

इसी तरह रोज़-रोज़ एक अनंत शव
ले जाते हैं कंधे
अँधेरी गली से
चमकती हुई गंगा की तरफ़

इस शहर में धूल
धीरे-धीरे उड़ती है
धीरे-धीरे चलते हैं लोग
धीरे-धीरे बजते हैं घंटे
शाम धीरे-धीरे होती है

यह धीरे-धीरे होना
धीरे-धीरे होने की सामूहिक लय
दृढ़ता से बाँधे है समूचे शहर को
इस तरह कि कुछ भी गिरता नहीं है
कि हिलता नहीं है कुछ भी
कि जो चीज़ जहाँ थी
वहीं पर रखी है
कि गंगा वहीं है
कि वहीं पर बँधी है नाव
कि वहीं पर रखी है तुलसीदास की खड़ाऊँ
सैकड़ों बरस से

कभी सई-साँझ
बिना किसी सूचना के
घुस जाओ इस शहर में
कभी आरती के आलोक में

© NCERT not to be republished

इसे अचानक देखो
अद्‌भुत है इसकी बनावट
यह आधा जल में है
आधा मंत्र में
आधा फूल में है

आधा शव में
आधा नींद में है
आधा शंख में
अगर ध्यान से देखो
तो यह आधा है
और आधा नहीं है

जो है वह खड़ा है
बिना किसी स्तंभ के
जो नहीं है उसे थामे है
राख और रोशनी के ऊँचे-ऊँचे स्तंभ
आग के स्तंभ
और पानी के स्तंभ
धुएँ के
खुशबू के
आदमी के उठे हुए हाथों के स्तंभ

किसी अलक्षित सूर्य को
देता हुआ अर्घ्य
शताब्दियों से इसी तरह
गंगा के जल में
अपनी एक टाँग पर खड़ा है यह शहर
अपनी दूसरी टाँग से
बिलकुल बेखबर!

© NCERT not to be republished

Reprint 2025-26